

आदेश सुरक्षित: 19.04.2022

आदेश पारित: 12.05.2022

उच्च न्यायालय उत्तराखण्ड, नैनीताल
रिट याचिका संख्या 2371 वर्ष 2021 (मैसर्स)

खुशाल सिंह अधिकारी

..... याचिकाकर्ता

बनाम्

उत्तराखण्ड राज्य और अन्य

..... उत्तरदाता

अधिवक्ता: श्री शोभित सहरिया, याचिकाकर्ता की ओर से।

श्री टी.एस.फार्टियाल, उत्तराखण्ड सरकार की ओर से अतिरिक्त सी.एस.सी.।

श्री शैलेंद्र सिंह चौहान, उत्तरदाता संख्या 2 व 4 की ओर से।

श्री हरि ओम भाकुनी, उत्तरदाता संख्या 5 की ओर से।

माननीय शरद कुमार शर्मा, ज0

रिट याचिका की कार्यवाही का चरण, जिस पर इस न्यायालय को अन्तरिम आदेश दिनांक-18.11.2021, जिसे इस न्यायालय द्वारा एक संविदात्मक मामले में पारित किया गया है, की सत्यता की जांच करने के उद्देश्य से स्थगन अवकाश आवेदन विचार करने के लिये रखा गया है, जहां रतिघाट से बुढ़ला कोट तक मोटर मार्ग के चरण 2 के लिये कार्य पैकेज संख्या 07/08 को प्रभावित करता है, पर विचार किये जाने की आवश्यकता है कि निविदा प्रक्रिया पर रोक लगाई जा सकती है, जिसके परिणामस्वरूप पहाड़ी क्षेत्रों में सड़कों को बिछाने के लिये एक परियोजना का पूरा कार्य रोकना होगा।

2. इस न्यायालय को याचिकाकर्ता के साथ-साथ उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा की गई विस्तृत दलीलों का उल्लेख करना पड़ा है, जिसके अन्तर्गत याचिकाकर्ता के अधिवक्ता के द्वारा यह कहा गया है कि प्रश्नगत मामले में अन्तरिम आदेश पारित करना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि उसके अभाव में यह पूरी तरह से निरर्थक हो जायेगा, जिसमें याचिकाकर्ता ने रिट याचिका में आदेश दिनांकित 30.11.2011, जिसे दिनांक 01.11.2021 को अपलोड किया गया है, चुनौती दी है, जिसे उत्तरदाता नियोक्ता द्वारा याचिकाकर्ता की तकनीकी बोली को अस्वीकार करते हुये पारित किया गया था, जो कि निविदा प्रक्रिया में प्रकाशन संदर्भ संख्या 1421/11-02/(XIX) आईटीसीओ/यूआरआरडीए/21 दिनांकित 01.09.2021 के अनुसरण में बोलियों के निमंत्रण के परिणामस्वरूप प्रारम्भ की गई।

3. इस न्यायालय के लिये यह अपरिहार्य हो जाता है कि वह याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विस्तारित तर्क का उत्तर देने के लिये सटीक तरीके से पृष्ठभूमि पर विचार करने से बचे। याचिकाकर्ता द्वारा कथित किया गया है कि वह एकमात्र स्वामित्व वाली फर्म है, जिसे पी0डब्लू0डी विभाग के साथ ए क्लास कॉन्ट्रैक्टर के रूप में पंजीकृत किया गया है और जो सड़कों के निर्माण के कार्य में लगी है और एनआईटी द्वारा बोलियों के निमंत्रण दिनांकित 01.09.2021, जिसे उपरोक्त कार्य पैकेज के सम्बन्ध में यूआरआरडीए द्वारा जारी किया गया है।

याचिकाकर्ता द्वारा यह भी कथन किया गया है कि 09 अक्टूबर, 2021 की निविदा सारांश रिपोर्ट के अनुसार, जब इसे उत्तरदाता द्वारा अपलोड किया गया था, तो याचिकाकर्ता की बोली को सात अन्य बोलीदाताओं के साथ मानक आधार दस्तावेज के खण्ड 22.5 के संदर्भ में तकनीकी रूप से उत्तरदायी ठहराया गया था।

4. याचिकाकर्ता द्वारा यह भी कथन किया गया है कि एक बार जब याचिकाकर्ता की बोली को आदेश दिनांकित 09.10.2021 के द्वारा तकनीकी रूप से उत्तरदायी बोली के रूप में घोषित कर दिया जाता है, तो उत्तरदाता के द्वारा एक निजी आधार पर की गई कार्यवाही, जिसे उत्तरदाता संख्या 5 द्वारा दिनांक-13.10.2021 को प्रस्तुत किया गया था, जिसमें निर्णय लेते समय याचिकाकर्ता की बोली को तकनीकी रूप से दिनांक-01.11.2021 के आदेश द्वारा उन आधारों पर, जिन्हें आक्षेपित आदेश में दर्शाया गया है, गैर उत्तरदायी ठहराया गया था। याचिकाकर्ता द्वारा यह भी कथन किया गया है कि याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत बोली पर और इसकी घोषणा के बाद कि वह तकनीकी रूप से व्यवहार्य है, निजी उत्तरदाता संख्या 5 द्वारा आपत्ति की गई, तो याचिकाकर्ता ने दिनांक-13.10.2021 के कारण बताओ नोटिस का जवाब देते हुये दिनांक-14.10.2021 के जवाब में कथन किया कि मानक बोली दस्तावेज धारा 2 के अनुसार, जो बोलीदाताओं के लिये एक निर्देश था और उसके आई0टी0बी0 (4.4.बी)(बी)(आई) में मानक भवन दस्तावेज का परिशिष्ट जुड़ा है, जो निम्नलिखित है-

*“(4.4.बी)(बी)(आई) सड़क कार्यों और क्षेत्र परीक्षण प्रयोगशाला रोडवर्क्स
के लिए प्रमुख उपकरण हैं: सड़क कार्यों के लिए”*

5. याचिकाकर्ता द्वारा यह कथन किया गया है कि उन्होंने तीन “ट्रैक्टरों” के कागजात रिकॉर्ड पर प्रस्तुत किये हैं, जिन्हें संभावित बोलीदाताओं द्वारा आवश्यक तकनीकी उपकरणों की उपलब्धता स्थापित करने के लिए पूर्ण रूप से भरे जाने की पूर्व शर्त के रूप में प्रस्तुत किया जाना आवश्यक था, जो सड़क के निर्माण कार्य का निष्पादन जैसा कि उत्तरदाताओं द्वारा अपनाई गई बोली प्रक्रिया द्वारा समाहित किया गया है।

6. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा एक बहुत ही दिलचस्प अन्तर निकाला गया है, कि यदि मानक बोली दस्तावेज को ही ध्यान में रखा जाता है, जो यह निर्धारित करता है कि बोली लगाने वाले को “ट्रैक्टर” का विवरण प्रदान करना होगा, वास्तव में विशेष रूप से चरण II कार्य के लिये खण्ड 4.4.बी(बी)(आई) के तहत निहित शर्तों के अनुसार मानक बोली दस्तावेज यह उल्लिखित करता है कि चरण 2 के काम के लिये एक ठेकेदार के पास जो तकनीकी उपकरण होना आवश्यक है, जिसके साथ हम तत्काल मामले में सम्बन्धित है, इसलिये निम्नलिखित उपकरण शामिल है, जिन्हें निविदाकर्ता के पास रखना आवश्यक है।

“स्टेज -II वर्क्स के लिये

हाइड्रोलिक एक्सकेवेटर 70 एचपी-1 नग।

एयर कंप्रेसर 140 CF-1 नग।

कंक्रीट मिक्सर 0.30 कम-1 नं.

कंक्रीट वाइब्रेटर 1 HP-2 नग।

टिपर 3 कम-4 नग

पानी का टैंकर 3 केएल-3 नग

ट्रैक्टर-3 नं.

रोड रोलर-3 नग

मिनी हॉट मिक्स प्लांट/मिक्सोल बैटरी-1 संख्या।”

7. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा यह कथन किया गया है कि उत्तरदाता संख्या 5 द्वारा उठाई गई आपत्ति पर निम्नलिखित प्रभाव है:-

“1 खुशाल सिंह अधिकारी द्वारा पेज नं0 166, 168 जो ट्रैक्टर लगाये गये हैं, केवल कृषि कार्य हेतु ही पंजीकृत हैं, जो एक गैर परिवहन वाहन है। केन्द्रीय मोटर वाहन नियम 1989 (अध्याय 1) के अनुसार जिसका उपयोग व्यवसायिक एवं अन्य कार्य हेतु नहीं किया जा सकता है। संलग्न केन्द्रीय मोटर वाहन नियम 1989 (अध्याय 1(2बी))”

इसके बारे में तर्क देते हुए कि याचिकाकर्ता के पास तीन “ट्रैक्टर” की उपलब्धता के समर्थन में दायर दस्तावेज, चूंकि बोली दस्तावेजों में दिखाए गए “ट्रैक्टर” को कृषि “ट्रैक्टर” के रूप में पंजीकृत किया गया था, इसलिए वे मानक बोली दस्तावेज के खंड 4.4(बी)(बी)(आई) की पूर्व शर्तों को पूरा करने के लिए नहीं आएंगे।) याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा यह कथन किया गया है कि चूंकि मानक बोली दस्तावेज में “ट्रैक्टर” को वर्गीकृत नहीं किया गया है, इसलिए इसे “ट्रैक्टर” होना चाहिए, जिसे पंजीकृत किया जा रहा है, जिसका उपयोग वाणिज्यिक गतिविधियों, चूंकि इसे मानक बोली दस्तावेज में अलग नहीं किया गया है, इसलिए इस तथ्य के बावजूद कि चाहे वह कृषि उपकरण के रूप में पंजीकृत किया गया हो या नहीं, तीन “ट्रैक्टरों” के संबंध में दस्तावेजों की आपूर्ति का कोई असर नहीं होगा, क्योंकि नियोक्ता को मानक बोली दस्तावेज प्रकाशित करते समय निविदाओं को आमंत्रित करते समय उसी में वर्गीकृत होना चाहिए था। ठेकेदार को इस शर्त को पूरा करने में सक्षम बनाने के लिए, जो याचिकाकर्ता की सफल बोली को अस्वीकार करने का कारण था, कि ट्रैक्टर को कृषि ट्रैक्टर के रूप में पंजीकृत किया गया था, इसे बोलचाल की भाषा में वाणिज्यिक गतिविधियों के लिए उपयोग किया जाने वाला “ट्रैक्टर” नहीं माना जा सकता है, जिसके कारण उसे अब गैर-अनुकूल बना दिया गया है।

8. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा यह भी कथन किया गया है कि यदि चुनौती के अधीन आक्षेपित निर्णय को ध्यान में रखा जाता है, तो वास्तव में उसमें दिए गए कारणों को केवल “अस्वीकार” किया जाता है। यह रिट याचिका (पृष्ठ 158) के संलग्नक 6 के रूप में संलग्न

दस्तावेज की प्रविष्टि संख्या 5 से स्पष्ट होगा। याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने कथन किया है कि मोटर वाहन अधिनियम, 1988 धारा 2 की उपधारा (44) के अन्तर्गत "ट्रैक्टर" को परिभाषित किया गया है जो निम्नलिखित है—

“(44) “ट्रैक्टर” से ऐसा मोटर यान अभिप्रेत है जो स्वयं (नोदन के प्रयोजन के लिये काम में आने वाले उपस्कर से भिन्न) कोई भार वहन करने के लिये निर्मित नहीं किया गया है, किन्तु इसके अन्तर्गत रोड-रोलर नहीं है;”

9. वास्तव में, उनका तर्क है कि इसमें दी गई “ट्रैक्टर” की परिभाषा को ध्यान में रखते हुए, इसका अर्थ केवल एक मोटर वाहन है, जो अपने आप में किसी भी भार को वहन करने के प्रयोजनों के लिए संविदा का निर्माण नहीं करता है, इसके अलावा जो उपकरण इससे जुड़े हैं, जिसका उपयोग प्रणोदन के प्रयोजनों के लिए किया जाता है और इसलिए उन्होंने यह कथन किया है कि एक बार ट्रैक्टर को मोटर वाहन के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसका उपयोग केवल प्रणोदन के प्रयोजनों के लिए किया जाना है, उस स्थिति में याचिकाकर्ता की तकनीकी बोली को अस्वीकार करने के लिए जो भेद बनाया गया है, वह संतोषजनक आधार नहीं होगा, क्योंकि मोटर वाहन अधिनियम स्वयं कृषि “ट्रैक्टर” या वाणिज्यिक “ट्रैक्टर” के मध्य कोई अंतर नहीं करता है, जो एक सफल बोलीदाता के रूप में घोषित किए जाने के बावजूद, याचिकाकर्ता की तकनीकी बोली को अस्वीकार करने के कारणों के लिए और आपत्ति का कारण भी है।

10. वह केंद्रीय मोटर वाहन नियम 1989 के अन्तर्गत निहित प्रावधानों के संदर्भ से अपने तर्क को ओर पुष्ट करते हैं, जिसमें धारा 2 की उपधारा (बी) के अन्तर्गत, “कृषि ट्रैक्टर” शब्द को स्वतंत्र रूप से परिभाषित किया गया है जो निम्नलिखित है:

“(बी) “कृषि ट्रैक्टर” का अर्थ किसी भी यांत्रिक रूप से संचालित 4-पहिया वाहन से है जो विभिन्न क्षेत्र संचालन और/या कृषि सामग्री के परिवहन के लिए ट्रेलरों के लिए उपयुक्त उपकरणों के साथ काम करने के लिए डिजाइन किया गया है। कृषि ट्रैक्टर एक गैर-परिवहन वाहन है,

(ग) “कृषि ट्रेलर” से आम तौर पर एकल/डबल एक्सल निर्माण के साथ खुला छोड़ दिया गया ट्रेलर अभिप्रेत है, जिसे दो हुकों के माध्यम से एक कृषि ट्रैक्टर के साथ जोड़ा जाता है और मुख्य रूप से कृषि सामग्री के परिवहन के लिए उपयोग किया जाता है;”

11. उक्त नियम के नियम 2 के उपनियम (सी) में स्वतंत्र रूप से कृषि ट्रेलर को परिभाषित किया गया है, जिसका अर्थ है कि कृषि ट्रेलर, हुक के माध्यम से भार वहन करने के प्रयोजनों के लिए कृषि “ट्रैक्टर” से लगाव होगा, जिसका उपयोग मुख्य रूप से कृषि सामग्री के

परिवहन के लिए किया जाएगा। जिस कारण याचिकाकर्ता का कथन है कि चूंकि मानक बोली दस्तावेज में ही कोई अंतर नहीं किया गया था कि वास्तव में "ट्रैक्टर" का क्या अर्थ होगा, क्योंकि इसमें इस्तेमाल किए गए शब्द के लिए, अब इसे पढ़ने के लिए अलग नहीं किया जा सकता है कि ठेकेदार द्वारा प्रस्तुत किया जाने वाला दस्तावेज वाणिज्यिक "ट्रैक्टर" के संबंध में होना था। या एक कृषि ट्रैक्टर के। इसलिए, उसका कथन है कि चूंकि नियोक्ता और याचिकाकर्ता बोलीदाता के बीच पारस्परिक संबंध, मानक बोली दस्तावेज की शर्तों द्वारा शासित किया जा रहा था, इसलिए इसे इसके विपरीत बढ़ाया या पढ़ा नहीं जा सकता है, और वह भी निजी उत्तरदाता संख्या 5 की शिकायत पर, इस संदर्भ में कि वाहन के लिए प्रस्तुत दस्तावेज, जिसे कृषि "ट्रैक्टर" के रूप में पंजीकृत किया गया है, आईटीबी 4.4(बी)(बी)(आई) के अनुसार एक ठेकेदार को बोली प्रक्रिया में भाग लेने के लिए पात्र बनाने के उद्देश्य से वाणिज्यिक "ट्रैक्टर" को बोलचाल की भाषा में नहीं पढ़ा जा सकता है।

12. इस न्यायालय के समक्ष दिनांक-10.11.2021 को इस मामले की सुनवाई समन्वय पीठ द्वारा की गई थी और समन्वय पीठ ने आदेश दिनांकित-18.11.2021 के द्वारा निम्नलिखित आदेश पारित किए थे-

"लिस्टिंग की अगली तिथि तक रतिघाट से बुढलाकोट तक मोटर रोड के दूसरे चरण के काम के लिए पैकेज संख्या 07-08 में यथास्थिति बरकरार रखी जाएगी।"

13. इस न्यायालय को लगता है कि याचिकाकर्ता ने भी अपनी दलीलों का जवाब देने के लिए उसे बुलाया है, कि "ट्रैक्टर" शब्द का सटीक अर्थ क्या होगा, जो उसकी तकनीकी बोली को रद्द करने के आदेश के सह-संबंध में अनुमान लगाया जाएगा। विस्तारित तर्क का उत्तर देने के लिए एक बहुआयामी टिप्पणियां हो सकती हैं, जो न्यायालय द्वारा की जा सकती हैं, परन्तु चूंकि इसका रिट याचिका के अंतिम निर्णय पर अंतिम प्रभाव पड़ सकता है, इसलिए यह न्यायालय एहतियातन केवल इस स्तर पर पहलू पर विचार करने के उद्देश्य से अपनी टिप्पणी को सीमित कर रहा है कि क्या इस तरह की अजीबोगरीब परिस्थितियों में पहाड़ी क्षेत्रों में सड़कें बिछाने के ठेके को रोके रखने की निविदा प्रक्रिया में अंतरिम आदेश पारित किया जा सकता है।

14. न्यायमूर्ति वाई.वी. चंद्रचूड़ द्वारा एडवांसड लॉ लेक्सिकॉन के तीसरे संस्करण में, "ट्रैक्टर" शब्द को व्यापक रूप से विचारित किया है, जिसकी व्याख्या के अनुसार यह पाया गया है कि, यदि सीमा शुल्क अधिनियम, 1975 के प्रावधानों को ध्यान में रखा जाये, तो अनुसूची-1 में दिए गए "ट्रैक्टर" के विवरण के संदर्भ में, इसका मतलब यह होगा कि यह एक वाहन है, जो अनिवार्य रूप से किसी अन्य वाहन, उपकरणों या लोड को खींचने या धक्का देने के लिए बनाया गया है, चाहे वे उपकरण, बीज, उर्वरक और अन्य कृषि उत्पादों के लिए

“ट्रैक्टर” के मुख्य उपयोग के संबंध में परिवहन के लिए सहायक प्रावधानों के साथ निहित और निर्धारित हों या नहीं।

15. न्यायालयों द्वारा देखा गया है कि केंद्रीय उत्पाद शुल्क टैरिफ अधिनियम, 1986 के संदर्भ में, “ट्रैक्टर” शब्द का अर्थ विशेष रूप से एक उपकरण होगा, जिसका उपयोग मशीन या कार्य उपकरण के रूप में किया जाता है, जिसे इससे जुड़े वाहक को फिट करने के लिए डिजाइन किया गया है, एक अंतर-परिवर्तनीय उपकरण के रूप में, इसे केवल संबंधित शीर्षकों के साथ वर्गीकृत किया गया है, भले ही “ट्रैक्टर” के साथ प्रस्तुत किया गया हो, एक ट्रेलर के साथ लगाया गया, कृषि उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल किया जाना है। परन्तु यदि “ट्रैक्टर” की उपरोक्त सहसंबद्ध परिभाषा को मोटर वाहन अधिनियम की धारा 2 की उपधारा (44) के अन्तर्गत दी गई “ट्रैक्टर” की परिभाषा के संदर्भ में देखा जाए, तो यह केवल एक मोटर वाहन है, जिसका किसी भी भार को ले जाने के लिए निर्माण और डिजाइन किया गया है, लेकिन अपने आप में नहीं, बल्कि केवल अन्य उपकरणों द्वारा जिन्हें इसके साथ जोड़ा जाना है। न्यायमूर्ति एम. एल. सिंघल द्वारा “सुप्रीम कोर्ट ऑन वर्ड्स एण्ड फ्रेजिस” पुस्तक में दी गई “ट्रैक्टर” शब्द की व्याख्या को जारी रखते हुए, यह प्रावधानित किया गया है कि मोटर वाहन अधिनियम की धारा 2 की उपधारा (44) के प्रावधानों को अलग से नहीं पढ़ा जाना चाहिए, बल्कि इसे धारा 2 की उपधारा (46) के साथ पढ़ा जाना चाहिए, साथ ही मोटर वाहन अधिनियम की धारा 2 की उपधारा (47) के साथ भी पढ़ा जाना चाहिए। इसमें जो तर्क दिया गया है वह यह है कि यदि धारा 2 की उप-धारा (44) पर वास्तव में विचार किया जाता है, तो “ट्रैक्टर” मोटर वाहन अधिनियम की धारा 2 की उपधारा (28) के अन्तर्गत परिभाषित मोटर वाहन होगा। चूंकि मोटर वाहन अधिनियम के अन्तर्गत मोटर वाहन, “ट्रैक्टर” और ट्रेलर, माल उठाने के लिए इससे जुड़े हुए हैं, जिसके लिए “ट्रैक्टर” प्रणोदन मशीन के रूप में कार्य करता है, ट्रेलर को अधिनियम की धारा 2 की उपधारा (46) के अन्तर्गत पृथक से परिभाषित किया गया है। “ट्रैक्टर” 1988 के अधिनियम के अन्तर्गत केवल मोटर वाहन होगा।

16. इसलिए, न्यायमूर्ति एम.एल. सिंघल द्वारा शब्दों और वाक्यांशों की व्याख्या पर उपरोक्त पुस्तक में यह देखा गया है कि किसी को मोटर वाहन शब्द को व्यापक रूप से पढ़ना होगा, क्योंकि अधिनियम के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, जिसे मोटर वाहनों, परिवहन वाहन आदि पर इसकी जांच और नियंत्रण रखने के लिए अधिनियमित किया गया है, और मोटर वाहन अधिनियम धारा 2 की उपधारा (28) के अन्तर्गत के प्रावधान और अधिनियम की धारा 2 की उपधारा (44) के अन्तर्गत “ट्रैक्टर” के संयुक्त पठन पर, यह “मोटर वाहन” की परिभाषा के अन्तर्गत आएगा, जो यांत्रिक रूप से एक चालित वाहन है, जो बिजली के स्रोत के बावजूद सड़कों पर उपयोग के लिए उपयुक्त है और इसमें एक ट्रेलर भी शामिल है। ट्रैक्टर को केवल एक कृषि प्रणोदन मशीन के रूप में माना जाना है, जो ऑटोमोबाइल इंजीनियरिंग की

अवधारणा के तहत, अपने आप में स्वतंत्र रूप से माल वाहक नहीं है। उस स्थिति में “ट्रैक्टर” की स्वतंत्र कानूनी व्याख्या, अगर इसे केंद्रीय मोटर वाहन नियम, 1989 के तहत परिभाषित कृषि “ट्रैक्टर” की परिभाषा के अनुरूप पढ़ा जाए, तो यह केवल एक कृषि उपकरण होगा। इस प्रकार इन दृष्टिकोणों से, मेरा विचार है कि एक बार मोटर वाहन अधिनियम के तहत वाहन के पंजीकरण का आशय और उद्देश्य, एक कृषि उपकरण के माध्यम से पंजीकरण है, और यदि इसे वाणिज्यिक गतिविधि के लिए उपयोग किए जाने वाले मानक बोली दस्तावेज में शामिल किया गया है, तो यह वर्तमान मामले में मानक बोली दस्तावेज में दी गई “ट्रैक्टर” की परिभाषा को पूर्ण और संतुष्ट नहीं करेगा, जहां इसका उपयोग एक अनुबंध के अनुसार काम के प्रदर्शन के लिए किया जाना है, जो एक गैर-कृषि गतिविधि है।

17. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि चूंकि मानक बोली दस्तावेज के तहत, यह स्वयं मौन है और इसे “ट्रैक्टर” को वाणिज्यिक परिवहन वाहन होने से बाहर करने के लिए विस्तृत नहीं किया जा सकता है, यह एक अवधारणा है, जो इस न्यायालय द्वारा स्वीकार्य नहीं है क्योंकि मानक बोली दस्तावेज, अपने आप में एक कानून नहीं है, जैसा कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 13, उप अनुच्छेद (3) के तहत परिभाषित कानून है और मोटर वाहन नियम 1989 के अन्तर्गत कृषि “ट्रैक्टर” की परिभाषा पर वरीयता नहीं होगी। कर्नाटक उच्च न्यायालय की समन्वय पीठ ने (2008) 3 टी.ए.सी. 163 डिवीजनल मैनेजर, यूनाइटेड इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम अक्काव्वा और अन्य में, हालांकि मोटर दुर्घटना के मामले में एकल न्यायाधीश ने अपने पैरा 2, 3, 5, 14, 15, 16 और 17 में अवधारित किया है जो निम्नलिखित हैं:—

“2. The case of the respective claimants is that on 21.8.2001, when they, along with several others, were travelling in the **tractor-cum-trailer** No. KA-28/T-1170 & 1171 on Bagalakote-Alamatti Road, the vehicle, being driven in a rash and negligent manner by the driver concerned, turned turtle leading to the above named claimants suffering injuries along with many others, who were also in the said vehicle. The claim petitions filed by the claimant mentioned above came to be allowed and claimant Akkavva was awarded a sum of Rs. 75,500/- and the other claimant Neelawwa was awarded a sum of Rs. 26,250/- by the M.A.C.T. as compensation, putting the liability on the appellant to satisfy the award amounts.

3. The said order of the M.A.C.T. is called in question mainly on the ground that the **tractor-cum-trailer, though insured with the appellant, the policy issued was one coming under the farmer's package** and, therefore, the appellant is not liable to pay the compensation because the claimants were found travelling in the tractor-cum-trailer and **the vehicle was not being used for agricultural purposes and farmer's policy did not cover the risk**

of any other persons except those mentioned in the policy itself. Therefore, the question of the Insurance Company becoming liable will not arise. Another ground urged in the appeals is that, as the vehicle was used as a transport vehicle to carry the claimants as well as many others, the insured ought to have obtained necessary permit as required under Section 66 of the Motor Vehicles Act, 1988 no such permit was obtained by the insured. The claimants and others, who were found travelling in the tractor-cum-trailer, were never the employees of the insured and, as such, the question of covering the risk of the claimants even under Section 147 of the Act will not arise. It is on these grounds, the awards of the Tribunal are being assailed in these two appeals.

5. The learned Counsel for the appellant contended that **the tractor along with the trailer together constituted a goods vehicle** and, as such, it was incumbent on the part of the insured to have obtained necessary permit as required under Section 66 of the Act and no such permission was obtained in the instant case and, therefore, there is clear violation of the requirement of law on the part of the insured. The vehicle in question was used for the purpose other than agricultural purpose and therefore, no liability will fall on the insurer in view of the nature of the policy taken out by the insured. The risk of the claimants also is not covered by the policy in question and it is nobody's case that the two claimants herein were the employees engaged in the vehicle in question by the insured or that the two claimants were actually employed in the vehicle for the purpose of carrying out the agricultural operation. It is not the case of the claimants that they were actually employed in the vehicle. Therefore, Section 147 of the M.V. Act has no application to the case on hand. In support of the above submission, the learned Counsel place reliance on the decisions of the Apex Court reported in *National Insurance Co. Ltd. v. Challa Bharathamma*, 2004 A.C.J. 2094 : 2005 (1) T.A. C. 4 (S.C.); *Ramashray Singh v. New India Assurance Co. Ltd.*, 2003 A.C.J. 1550 : 2003 (3) T.A.C. 3 (S.C.) and *Natwar Parikh & Co. Ltd. v. State of Karnataka*, 2006 A.C.J. 1 (S.C.) and also the decision of this Court in *United India Insurance Co. Ltd. v. Hanamanthappa*, 2006 A.C.J. 2794 (Kant.).

14. In the decision reported in *National Insurance Co. Ltd. v. V. Chinamma and Ors.* reported in MANU/SC/0698/2004 AIR 200 SC 4338 , the Apex Court has observed that the Insurance Company will not be liable if vegetables are carried in a tractor for being transported to the market for sale and such an use of the vehicle cannot be termed as use of the tractor for agricultural purpose and **hence the Court held that the vehicle was not used for agricultural purpose.** In the very same decision at paragraph No. 15 of the judgment, it has been observed thus:

“(15) A tractor fitted with trailer may or may not answer the definition of 'goods carriage' contained in Section 2(14) of the Motor Vehicles Act. The tractor was meant to be used for agricultural purposes. **The trailer attached to the tractor, thus necessary is required to be used for agricultural purposes, unless registered otherwise.** It may be, as has been contended by Mrs. K. Sharda Devi, that carriage of vegetables being agricultural produce would lead to an inference that the tractor was being used for agricultural purposes but the same by itself would not be construed to mean that the tractor and trailer can be used for carriage of goods by another person for his business activities. The deceased was a businessman. He used to deal in vegetables. After he purchased the vegetables, he was to transport the same to market for the purpose of sale thereof and not for any agricultural purpose. Tractor and trailer, therefore, were not being used for agricultural purposes.”

15. In another decision reported in *New India Assurance Company Limited v. Sandepudi Mariyamma and Ors.* 2004 A.C.J. 1692 (A.P.), High Court of Andhra Pradesh has referred to number of decisions concerning the policy issued in respect of agricultural purposes. After referring to several decisions, it has been held that when the policy covered the tractor-trailer with a condition to use for agricultural purposes only and the policy did not cover use of the vehicle for hire or reward, the insurance company will not be liable where the owner had given the vehicle for hire and it has been used for transporting slabs for construction house.

16. The effect of the above decisions is that a vehicle, which is insured for agricultural purpose, cannot be used for any other purpose and if so used in contravention of the policy taken, the insurance company will not be liable. Coming to the decisions referred to by the learned Counsel for the claimants as well as insured are concerned, the decision in M.F.A. No. 2545/2003 of this Court concerns a person travelling as a loader in the tractor cum trailer and therefore, the Court observed that the claimants are entitled for compensation as per the W.C. Act. At the same time, it was observed in the said decision at paragraph No. 6 that the insurer has not placed any evidence before the Court to show that it is an agricultural tractor-trailer. The facts therefore are different from the one with which we are concerned, because in the instant case, the policy Ex.R1 clearly indicates that the tractor-cum trailer was to be used only for agricultural purpose and for no other purpose.

17. As regards the decision reported in 1996 (1) K.L.J. 417 is concerned, that was a case in which the policy in question was not a policy of the nature that is taken out by the insured in the instant case. Therefore, referring to Rule 100(1) of the M.V. Act, 1989, this

Court had held that the insurer cannot be absolved of liability to pay compensation as statutory requirement is to cover the risk of six employees apart from the driver. The said decision therefore, is not applicable to the case on hand. Similar is the situation in the case of *Bhimavva and Ors. v. Shankar and Ors.* in as much as in the said case, the Court held that the insurance company will be liable to the extent of liability under the W.C. Act in respect of employees travelling in the goods vehicle. Thus, we see the facts are quite different and it is not a case of a tractor cum trailer being used for agricultural purposes.”

18. उपरोक्त निर्णय में, यह अवधारित किया गया था कि “ट्रैक्टर” एक कृषि उपकरण होने के बाद से, किसान पैकेज के तहत आ रहा है, जिसका उपयोग किसी भी कृषि उद्देश्यों के लिए नहीं किया जा रहा था और न ही नीति के अन्तर्गत पंजीकृत किया गया है, इसे वाणिज्यिक वाहन के रूप में नहीं माना जाएगा। इसलिए यह तर्क कि केवल “ट्रैक्टर” के साथ एक ट्रेलर जुड़े होने के कारण मोटर वाहन अधिनियम धारा 2 उपधारा (44) के अन्तर्गत पंजीकृत कृषि उपकरण से पहले उसका माल को ले जाना अनिवार्य था, यदि इसका उपयोग किसी वाणिज्यिक गतिविधि के लिए किया जा रहा है, तो उसे मोटर वाहन अधिनियम की धारा 66 के अन्तर्गत आवश्यक परमिट की पूर्व अनुमति होनी चाहिए और यदि ऐसा नहीं है, “ट्रैक्टर” ट्रॉली की प्रकृति एक कृषि उपकरण के रूप में जारी रहेगी और 1989 के नियमों के तहत प्रदान की गई कृषि “ट्रैक्टर” की परिभाषा के अन्तर्गत आएगी। चूंकि इस मामले में याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत किए गए बोली दस्तावेज में, यह मामला नहीं था कि “ट्रैक्टर” सह ट्रॉली का उपयोग कृषि उद्देश्यों के लिए किया जाना था। इसलिए, मोटर वाहन अधिनियम की धारा 66 के अन्तर्गत कोई परमिट और पूर्व अनुमति के अभाव में इसे वाणिज्यिक वाहन नहीं माना जा सकता है और यदि इसे कृषि उपकरण के रूप में पंजीकृत किया जा रहा है, जैसा कि वर्तमान मामले में निजी उत्तरदाताओं द्वारा आपत्ति जताई गई है, तो याचिकाकर्ता की तकनीकी बोली को इस संदर्भ में ही खारिज करना आवश्यक था।

19. माननीय उच्चतम न्यायालय ने (2004) 8 सुप्रीम कोर्ट केसेज 697, नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम वी चिन्नम्मा और अन्य के निर्णय में पैरा 15 और 16 में यह अवधारित किया है कि—

“15. Furthermore, a tractor is not even a goods carriage. The "good carriage" has been defined in Section 2(14) to mean "any motor vehicle constructed or adapted for use solely for the carriage of goods, or any motor vehicle not so constructed or adapted when used for the carriage of goods" whereas "tractor" has been defined in Section 2(44) to mean "a motor vehicle which is not itself constructed to carry any load (other than equipment used for the purpose of propulsion); but excludes a road-roller".

The "trailer" has been defined in Section 2(46) to mean "any vehicle, other than a semi-trailer and a side car, drawn or intended to be drawn by a motor vehicle".

16. A tractor fitted with a trailer may or may not answer the definition of goods carriage contained in Section 2(14) of the Motor Vehicles Act. **The tractor was meant to be used for agricultural purposes. The trailer attached to the tractor, thus, necessarily is required to be used for agricultural purposes, unless registered otherwise.** It may be as has been contended by Mrs. K. Sharda Devi, that carriage of vegetables being agricultural produce would lead to an inference that the tractor was being used for agricultural purposes but the same by itself would not be construed to mean that the tractor and trailer can be used for carriage of goods by another person for his business activities. The deceased was a businessman. He used to deal in vegetables. After he purchased the vegetables, he was to transport the same to market for the purpose of sale thereof and not for any agricultural purpose. The tractor and trailer, therefore, were not being used for agricultural purposes. However, even if it be assumed that the trailer would answer the description of the "goods carriage" as contained in Section 2(14) of the Motor Vehicles Act, the case would be covered by the decisions of this Court in Asha Rani (supra) and other decisions following the same, as the accident had taken place on 24-11-1991, i.e., much prior to coming into force of 1994 amendment."

20. चिन्नम्मा के पूर्वोक्त न्याय निर्णय में यह अवधारित किया गया है कि "ट्रैक्टर", जब इसे 1989 के केंद्रीय नियमों के अन्तर्गत कृषि "ट्रैक्टर" के रूप में स्वतंत्र रूप से पंजीकृत और परिभाषित किया जाता है, तो यह माल वाहक नहीं होगा, क्योंकि इसे मोटर वाहन अधिनियम की धारा 2 की उपधारा (14) के अन्तर्गत स्वतंत्र रूप से परिभाषित किया गया है और इस प्रकार एक बार अधिनियम ने स्वयं एक अलग अभिव्यक्ति दी है, एक माल वाहक एक स्वतंत्र वाहन है, जिसे अधिनियम के तहत परिभाषित किया गया है और जहां "ट्रैक्टर" को नियमों के साथ-साथ मोटर वाहन अधिनियम की धारा-2 उपधारा (44) के अन्तर्गत स्वतंत्र रूप से परिभाषित किया गया है, तो यह अपने आप में एक वाणिज्यिक वाहन या माल वाहक नहीं बन जाएगा और एक बार जब यह माल वाहक नहीं होगा जैसा कि उसकी बोली के समर्थन में दायर दस्तावेजों से स्पष्ट होगा, इसे एक वाणिज्यिक उपकरण या वाहन के रूप में नहीं माना जा सकता है, जिसका उपयोग मोटर वाहन अधिनियम की धारा 66 के तहत पूर्व अनुमति के बिना, इसके पंजीकरण के विपरीत उद्देश्य के लिए किया जा सकता है।

21. वर्तमान मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों के दृष्टिगत, इस न्यायालय को इस पहलू पर विचार करना है कि क्या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अन्तर्गत रिट अदालतें संविदात्मक मामलों में अंतरिम आदेश दे सकती हैं, जिसका सार्वजनिक हित के लिए

परियोजना को पूरी तरह से रोके रखने पर असर पड़ सकता है। इसके उत्तर में, न्यायालय का मत है कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णयों की श्रृंखला में इस मुद्दे पर लगातार विचार किया गया है, उनमें से कुछ पर यहां विचार किया जा रहा है।

22. यह स्पष्ट करने के लिए कि क्या कार्य परियोजनाओं से संबंधित मामलों में और विशेष रूप से जनहित और जन सुविधा से संबंधित कार्यों के संबंध में और वह भी पहाड़ी क्षेत्रों में सड़क बनाने के संदर्भ में अंतरिम आदेश पारित किए जा सकते हैं। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह अवधारित किया गया है कि पहाड़ी क्षेत्रों में उपयुक्त सड़कों की व्यवस्था करना क्षेत्र के नागरिकों का एक मौलिक अधिकार है, क्योंकि यह व्यक्तियों और वस्तुओं की गतिशीलता का एकमात्र उपलब्ध तरीका है, जैसा कि **एआईआर 1986 सुप्रीम कोर्ट 847, हिमांचल प्रदेश राज्य और अन्य बनाम उम्मेद राम शर्मा और अन्य** में अवधारित किया गया है। उक्त निर्णय का पैरा निम्नलिखित है:—

“11. It appears to us that in the facts of this case, the controversy lies within a short compass. It is well-settled that the persons who have applied to the High Court by the letter are persons affected by the absence of usable road because they are poor Harijan residents of the area, their access by communication, indeed to life outside is obstructed and/or prevented by the absence of road. The entire State of Himachal Pradesh is in hills and without workable roads, no communication is possible. Every person is entitled to life as enjoined in Article 21 of the Constitution and in the facts of this case read in conjunction with Article 19(1)(d) of the Constitution and in the background of Article 38(2) of the Constitution every person has right under Article 19(1)(d) to move freely throughout the territory of India and he has also the right under Article 21 to his life and that right under Article 21 embraces not only physical existence of life but the quality of life and for residents of hilly areas, access to road is access to life itself. These propositions are well-settled. We accept the proposition that there should be road for communication in reasonable conditions in view of our Constitutional imperatives and denial of that right would be denial of the life as understood in its richness and fullness by the ambit of the Constitution. To the residents of the hilly areas as far as feasible and possible society has constitutional obligation to provide roads for communication.

23. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अवधारित किया है कि पहाड़ी क्षेत्रों में सड़के बिछाना या सड़क उपलब्ध कराना एक मौलिक अधिकार है, यह सुनिश्चित करने के लिए सभी प्रयास और कार्य किए जाने चाहिए कि सड़क परियोजनाओं को बिछाने से संबंधित कार्य एक सख्त समय सीमा के भीतर पूरा किया जाए, ताकि निजी वाणिज्यिक हितों के लिए सार्वजनिक सुविधा पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।

24. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा एसएलपी (सी) संख्या 1616/2022, बालाजी वेंचर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र स्टेट पावर जेनरेशन कंपनी लिमिटेड तथा अन्य के निर्णय में, जो भी निविदा प्रक्रिया से उत्पन्न विवाद के संबंध में था, जहां निविदा दस्तावेज के एक खंड को चुनौती दी गई थी और उच्च न्यायालय द्वारा एक अंतरिम आदेश प्रदान किया गया था। उपर्युक्त निर्णय के पैरा 5 में, यह अवधारित किया गया है कि यदि अंतरिम राहत प्रदान करना, वस्तुतः अंतरिम स्तर पर रिट याचिका की अनुमति देने के समान है, अंतरिम राहत प्रदान करने के बराबर है, तो इस बात पर विचार करना होगा कि निविदा प्रक्रिया के परिणाम क्या होंगे और इसके तहत क्या किया जाना आवश्यक है, यदि रिट याचिका को पश्चातवर्ती स्तर पर खारिज कर दिया जाता है, और ऐसी स्थिति में इस तरह के अपवाद को बनाया जाना चाहिए, जहां यदि किसी विवाद के लिए गुण-दोष के आधार पर निर्णय की आवश्यकता होती है, तो कार्य परियोजना को स्थगित या रोक कर नहीं रखा जाना चाहिए और इसके बजाय न्यायालय को इस तथ्य के प्रति सचेत होना चाहिए कि यदि रिट याचिका की विफलता के परिणामस्वरूप, काम को स्थगित रखा जाता है, तो याचिकाकर्ता को रिट याचिका में सफल होने की स्थिति में वैकल्पिक तरीके के रूप में क्षतिपूर्ति प्राप्त करने के लिए पर्याप्त अवसर होंगे और ऐसे मामलों में न्यायालयों द्वारा कोई अंतरिम आदेश नहीं दिया जाना चाहिए। संबंधित पैरा 5 निम्नलिखित है:-

“5. Before we consider the submission on behalf of learned counsel for the petitioner on merits, we would like to observe and disapprove and deprecate the grant of interim 4 relief by the High Court vide orders dated 14.12.2021 and 20.01.2022 respectively. The interim relief which was granted by the High Court was as such a final relief which could have been granted after deciding the matter finally. The High Court passed an interim relief directing that the petitioner shall be allowed to take part in the tender process without insisting to the impugned requirement or obtaining NOC from Vimla and to issue a corrigendum to the tender notice. Thus, by way of interim relief the High Court directed to ignore the tender clause which was under challenge that too at the interim stage virtually allowing the main writ petition. We disapprove and deprecate the grant of such interim relief virtually allowing the writ petitions at an interim stage. **The High Court ought to have appreciated that if by way of interim relief, a tenderer/petitioner is permitted to participate in the tender process without insisting upon the tender clause which was under challenge and subsequently the writ petition is dismissed what would be the consequences.** In the present case itself subsequently the writ petition has been dismissed. The question may arise what will be the consequences of the interim order by which the petitioner was permitted to take part in the tender process without insisting upon

the impugned requirement by obtaining NOC from Vimla. Therefore, no such interim relief could have been passed by the High Court.

5.1 Now so far as the impugned Judgment and order passed by the High Court dismissing the writ petitions is concerned, what was challenged before the High Court was one of the tender conditions/clauses. The High Court has specifically observed and noted the justification for providing clause 1.12(V). The said clause was to be applied to all the tenderers/bidders. It cannot be said that such clause was a tailor made to suit a particular bidder. It was applicable to all. Owner should always have the freedom to provide the eligibility criteria and/or the terms and conditions of the bid unless it is found to be arbitrary, mala fide and/or tailor made. The bidder/tenderer cannot be permitted to challenge the bid condition/clause which might not suit him and/or convenient to him. As per the settled proposition of law as such it is an offer to the prospective bidder/tenderer to compete and submit the tender considering the terms and conditions mentioned in the tender document.

5.2 In the case of *Silppi Constructions Contractors vs. Union of India*, (2020) 16 SCC 489, it is observed in para 20 as under: “20. The essence of the law laid down in the judgments referred to above is the exercise of restraint and caution; the need for overwhelming public interest to justify judicial intervention in matters of contract involving the State instrumentalities; the courts should give way to the opinion of the experts unless the decision is totally arbitrary or unreasonable; the court does not sit like a court of appeal over the appropriate authority; the court must realise that the authority floating the tender is the best judge of its requirements and, therefore, the court's interference should be minimal. The authority which floats the contract or tender, and has authored the tender documents is the best judge as to how the documents have to be interpreted. If two interpretations are possible then the interpretation of the author must be accepted. The courts will only interfere to prevent arbitrariness, irrationality, bias, mala fides or perversity. With this approach in mind we shall deal with the present case.”

5.3 In the case of *Montecarlo Limited vs. National Thermal Power Corporation Limited*, (2016) 15 SCC 272, it is observed and held that the tender inviting authority is the best person to understand and appreciate its requirement and tender documents, so long as there are no mala fides/arbitrariness etc. It is further observed and held that the Government must have freedom of contract and such action can be tested by applying Wednesbury principle and also examining whether it suffers from arbitrariness or bias or mala fides.”

25. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 111, नेशनल हाई स्पीड रेल कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम मोंटेकार्लो लिमिटेड और अन्य के वाद में, पारित निर्णय दिनांकित 31.01.2022 के पैरा 15 और 16 में अवधारित किया है कि कार्य अनुबंधों में स्थगन देते समय रिट अदालतों को सावधानी रखनी चाहिए, जिसके परिणामस्वरूप बड़ी परियोजनाओं या सार्वजनिक हित की परियोजनाओं के निष्पादन में अंततः देरी होती है। उक्त निर्णय के पैरा 15 और 16 निम्नलिखित हैं—

“15. Before we part, we deem it proper to express few words of caution to the High Courts while entertaining the writ petitions challenging the tender process midway and/or while interfering with the tender process in the contracts, more particularly, with respect to the contracts/projects funded by the foreign countries and with respect to the Mega project like the present one. Before entertaining the writ petition with respect to such Mega projects funded by the foreign countries, one has to appreciate that funds of such Mega projects by the foreign country is followed by a detailed discussion between the Prime Ministers of both the countries and to strengthen bilateral cooperation in the rail sector. The foreign country is ready to invest/fund such a huge amount on non- negotiated terms and the Bid Documents are prepared by the foreign financial agency/country in accordance with the latest version of the Standard Bidding Documents. These investments from developed nations are made on the basis of non-negotiated terms and conditions, where the sole discretion as to what would be the conditions of the investments and on what terms the contractors would be chosen to implement the project, vests with the investor foreign developed nation. Considering the special peculiarities of such foreign sovereign funded development contracts, which can be envisaged and exist only due to the availability of the investment and willingness of the foreign sovereign country to finance such infrastructure project, the said contracts assume the different characteristics. Therefore, there shall be different considerations so far as the judicial interference is concerned between the foreign funded contracts and the ordinary public works contracts funded from public exchequer. It is always to be borne in mind and as observed by this Court in the case of Asia Foundation and Construction Ltd. (supra), it is difficult for a developing country to go ahead with such a high cost project unless the developed country grant loan/subsidy and/or ready to fund such high cost projects, which are very important projects for developing country, more particularly, when the developed country is ready to fund a huge amount at a minimal concessional rate of interest and on suitable terms and conditions of repayment. It is also to be noted that any delay in execution of such a Mega project, which is very important project for the developing country like India may not be in the larger public interest and in the nation's interest. Such an

interference by the Courts midway and delay in the projects like these which is funded by the foreign countries on bilateral mutual understanding/agreement by the developed country to a developing country may affect the future investments/funding. Many a times, such a delay in the execution of the project due to the intervention by the Courts may have cascading effect on the project cost and ultimately may increase the project cost and may impose heavy financial burden and lead to increased and unbudgeted expenditure. Therefore, while exercising the writ jurisdiction challenging the tender process midway and/or while entertaining the writ petition challenging the award of contract with respect to such Mega projects, more particularly, when such Mega projects are funded by the foreign countries, the Courts have to bear in mind the following principles laid down by this Court in the case of *Tata Cellular v. Union of India*, 1994 6 SCC 651 in paragraph 94 as under:

94. The principles deducible from the above are:

- (1) The modern trend points to judicial restraint in administrative action.
- (2) The court does not sit as a court of appeal but merely reviews the manner in which the decision was made.
- (3) The court does not have the expertise to correct the administrative decision. If a review of the administrative decision is permitted it will be substituting its own decision, without the necessary expertise which itself may be fallible.
- (4) The terms of the invitation to tender cannot be open to judicial scrutiny because the invitation to tender is in the realm of contract. Normally speaking, the decision to accept the tender or award the contract is reached by process of negotiations through several tiers. More often than not, such decisions are made qualitatively by experts.
- (5) The Government must have freedom of contract. In other words, a fair play in the joints is a necessary concomitant for an administrative body functioning in an administrative sphere or quasi-administrative sphere. However, the decision must not only be tested by the application of *Wednesbury* principle of reasonableness (including its other facts pointed out above) but must be free from arbitrariness not affected by bias or actuated by *mala fides*.
- (6) Quashing decisions may impose heavy administrative burden on the administration and lead to increased and unbudgeted expenditure.

Based on these principles we will examine the facts of this case since they commend to us as the correct principles.

Even while entertaining the writ petition and/or granting the stay which ultimately may delay the execution of the Mega projects, it must be remembered that it may seriously impede the execution of

the projects of public importance and disables the State and/or its agencies/instrumentalities from discharging the constitutional and legal obligation towards the citizens. Therefore, the High Courts should be extremely careful and circumspect in exercise of its discretion while entertaining such petitions and/or while granting stay in such matters. Even in a case where the High Court is of the prima facie opinion that the decision is as such perverse and/or arbitrary and/or suffers from mala fides and/or favouritism, while entertaining such writ petition and/or pass any appropriate interim order, High Court may put to the writ Petitioner's notice that in case the Petitioner loses and there is a delay in execution of the project due to such proceedings initiated by him/it, he/they may be saddled with the damages caused for delay in execution of such projects, which may be due to such frivolous litigations initiated by him/it. With these words of caution and advise, we rest the matter there and leave it to the wisdom of the concerned Court(s), which ultimately may look to the larger public interest and the national interest involved.

16. In view of the above and for the reasons stated above, the impugned judgment and order passed by the High Court is clearly unsustainable and the same deserves to be quashed and set aside and is accordingly quashed and set aside. Present appeal is allowed accordingly. The original writ petition before the High Court filed by the original writ Petitioner-Respondent herein stands dismissed.

No costs.

Pending application(s), if any, also stand disposed of.”

26. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह अवधारित किया है कि जिन मामलों में प्रथम दृष्टया मामला बनता है और यहां तक कि ऐसे मामले में भी जहां प्रथम दृष्टया विकृति है, उच्च न्यायालय को अंतरिम आदेश पारित करने से बचना चाहिए, जिससे जनहित की परियोजनाओं में देरी हो सकती है।

27. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **2020 एससीसी ऑनलाइन एससी 538**, राजस्थान राज्य भंडारण निगम बनाम स्टार एग्रीवेयरहाउसिंग एंड कोलेटरल मैनेजमेंट लिमिटेड और अन्य के वाद के पैरा 10 और 12 में यह अवधारित किया है कि रिट अदालतें, अनुबंध मामलों में, जहां विवाद बोली दस्तावेज की शर्तों को दी जाने वाली उचित व्याख्या से उत्पन्न हो रहा है, न्यायालय को आमतौर पर संविदात्मक मामलों में कोई भी अंतरिम आदेश पारित करने में संयम बरतना चाहिए, इसे केवल तभी दिया जाना चाहिए, जब अंतरिम आदेश के अभाव में किसी स्थिति में, इसका जनता के अधिकारों पर हानिकारक प्रभाव पड़ेगा, लेकिन प्रश्नगत मामले में, अंतरिम आदेश देना पहाड़ी क्षेत्रों से संबंधित लोगों के सार्वजनिक हितों के लिए हानिकारक है, जिन्हें समय पर उपयुक्त सड़कें प्रदान की जा रही हैं, जिसे पहले से ही माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त फैसले के अनुसार पहाड़ी लोगों के लिए जीवन का अधिकार माना गया

है, सड़कों को बिछाने की परियोजनाओं पर रोक उच्च न्यायालय द्वारा नहीं लगाई जानी चाहिए, क्योंकि रिट याचिका में सफल होने पर ठेकेदार को क्षतिपूर्ति के भुगतान द्वारा उपयुक्त रूप से पारिश्रमिक दिया जा सकता है। निर्णय के पैरा 10 और 12 निम्नलिखित हैं—

10. The question of grant of interim stay in contractual matters was examined by this Court in a judgment reported as Raunaq International Ltd. v. I.V.R. Construction Ltd. The Court held as under:

12. Therefore, we find that the grant of interim order which impinges upon the grant of contract by the Appellant is not in public interest that too without recording any reasons when the Writ Petition was dismissed by the Learned Single Judge.”

28. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा लगभग इसी प्रकार के विवाद में, जो अपीलकर्ता को निविदा देने से संबंधित है, जो एक सफल बोलीदाता था, जिसने बोली दस्तावेजों के मालिकाना हक और उस व्याख्या पर सवाल उठाते हुए एक रिट की मांग की थी, व्याख्या की गई थी। यह **रौनक इंटरनेशनल लिमिटेड बनाम आईवीआर कंस्ट्रक्शन लिमिटेड और अन्य** (1999)1 सुप्रीम कोर्ट केसेज 492 के वाद में अवधारित किया गया था, जिसके पैरा 13, 18 और 25 प्रासंगिक होंगे, जो निम्नलिखित हैं—

“13. Hence before entertaining a writ petition and passing any interim orders in such petitions, the court must carefully weigh conflicting public interests. Only when it comes to a conclusion that there is an overwhelming public interest in entertaining the petition, the court should intervene.

18. The same considerations must weigh with the court when interim orders are passed in such petitions. The party at whose instance interim orders are obtained has to be made accountable for the consequences of the interim order. The interim order could delay the project, jettison finely worked financial arrangements and escalate costs. Hence the petitioner asking for interim orders, in appropriate cases should be asked to provide security for any increase in cost as a result of such delay, or any damages suffered by the opposite party in consequence of an interim order. Otherwise public detriment may outweigh public benefit in granting such interim orders. Stay order or injunction order, if issued, must be moulded to provide for restitution.

25. Therefore, when such a stay order is obtained at the instance of a private party or even at the instance of a body litigating in public interest, any interim order which stops the project from proceeding further must provide for the reimbursement of costs to the public in case ultimately the litigation started by such an individual or body fails. The public must be compensated both for the delay in implementation of the project and the cost escalation resulting from

such delay. Unless an adequate provision is made for this in the interim order, the interim order may prove counterproductive.”

29. उपर्युक्त न्याय निर्णयों में, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह प्रावधानित किया है कि उच्च न्यायालयों को रिट याचिका पर विचार करने और कोई अंतरिम आदेश पारित करने से पहले, कार्य ठेकेदारों से संबंधित ऐसी याचिकाओं में, सीधे निविदा के तहत, जिसमें सरकारी खजाने को शामिल किया जाता है, जिसमें सार्वजनिक हित शामिल होता है, और जिसके कारण सार्वजनिक महत्व की परियोजना के प्रवर्तन में देरी हो सकती है, माननीय उच्चतम न्यायालय ने लगातार यह कहा है कि अंतरिम आदेश देते समय उच्च न्यायालयों को जनहित के बीच संघर्ष और निजी हितों के बीच संघर्ष पर विचार करना होता है और अंतरिम स्तर पर हस्तक्षेप केवल तभी किया जाना चाहिए जब अत्यधिक जनहित हो, जो निजी हित पर अभिभावी हो।

30. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने एक और निर्णय एआईआर 2019 सुप्रीम कोर्ट 3327, केयरटेल इन्फोटेक लिमिटेड बनाम हिंदुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड और अन्य के वाद में यह अवधारित किया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अन्तर्गत रिट अदालतों को निविदा दस्तावेज में सुधार करने या निविदा प्रक्रिया में भाग लेने का इरादा रखने वाले भावी निविदाकर्ता के लिए इसे अधिक उचित या निष्पक्ष बनाने के लिए कोई अधिकार नहीं है। वास्तव में निविदा का लेखक निविदा दस्तावेज की आवश्यकताओं को समझने और उनकी सराहना करने के लिए सबसे अच्छा व्यक्ति है, जिसे तत्काल मामले में आक्षेपित आदेश में सही ढंग से सराहा गया है, जिसमें मानक बोली दस्तावेज में उल्लिखित “ट्रैक्टर” का मतलब निश्चित रूप से केवल “एक वाणिज्यिक ट्रैक्टर” होगा, न कि “कृषि ट्रैक्टर”, जैसा कि 1989 के नियमों के अन्तर्गत परिभाषित किया गया है। उपर्युक्त सिद्धांतों को उक्त निर्णय के पैरा 36 से 42 में व्यापक रूप से निर्धारित किया गया था, जो निम्नलिखित हैं: —

“36. We consider it appropriate to make certain observations in the context of the nature of dispute which is before us. Normally parties would be governed by their contracts and the tender terms, and really no writ would be maintainable Under Article 226 of the Constitution of India. In view of Government and Public Sector Enterprises venturing into economic activities, this Court found it appropriate to build in certain checks and balances of fairness in procedure. It is this approach which has given rise to scrutiny of tenders in writ proceedings Under Article 226 of the Constitution of India. It, however, appears that the window has been opened too wide as almost every small or big tender is now sought to be challenged in writ proceedings almost as a matter of routine. This in turn, affects the efficacy of commercial activities of the public sectors, which may be in competition with the private sector. This could hardly have been the objective in mind. An unnecessary, close

scrutiny of minute details, contrary to the view of the tendering authority, makes awarding of contracts by Government and Public Sectors a cumbersome exercise, with long drawn out litigation at the threshold. The private sector is competing often in the same field. Promptness and efficiency levels in private contracts, thus, often tend to make the tenders of the public sector a non-competitive exercise. This works to a great disadvantage to the Government and the Public Sector.

37. In **Afcons Infrastructure Limited v. Nagpur Metro Rail Corporation Limited and Anr.**, this Court has expounded further on this aspect, while observing that the decision making process in accepting or rejecting the bid should not be interfered with. Interference is permissible only if the decision making process is arbitrary or irrational to an extent that no responsible authority, acting reasonably and in accordance with law, could have reached such a decision. It has been cautioned that Constitutional Courts are expected to exercise restraint in interfering with the administrative decision and ought not to substitute their view for that of the administrative authority. Mere disagreement with the decision making process would not suffice.

38. Another aspect emphasised is that the author of the document is the best person to understand and appreciate its requirements. In the facts of the present case, the view, on interpreting the tender documents, of Respondent No. 1 must prevail. Respondent No. 1 itself, appreciative of the wording of Clause 20 and the format, has taken a considered view. Respondent No. 3 cannot compel its own interpretation of the contract to be thrust on Respondent No. 1, or ask the Court to compel Respondent No. 1 to accept that interpretation. In fact, the Court went on to observe in the aforesaid judgment that it is possible that the author of the tender may give an interpretation that is not acceptable to the Constitutional Court, but that itself would not be a reason for interfering with the interpretation given. We reproduce the observations in this behalf as under:

15. We may add that the owner or the employer of a project, having authored the tender documents, is the best person to understand and appreciate its requirements and interpret its documents. The constitutional courts must defer to this understanding and appreciation of the tender documents, unless there is mala fide or perversity in the understanding or appreciation or in the application of the terms of the tender conditions. It is possible that the owner or employer of a project may give an interpretation to the tender documents that is not acceptable to the constitutional courts but that by itself is not a reason for interfering with the interpretation given.

39. We may also refer to the judgment of this Court in *Nabha Power Limited (NPL) v. Punjab State Power Corporation Limited (PSPCL) and Anr.*, authored by one of us (Sanjay Kishan Kaul, J.). The legal principles for interpretation of commercial contracts have been discussed. In the said judgment, a reference was made to the observations of the Privy Council in *Attorney General of Belize v. Belize Telecom Ltd.* as under:

16. Before discussing in greater detail the reasoning of the Court of Appeal, the Board will make some general observations about the process of implication. The court has no power to improve upon the instrument which it is called upon to construe, whether it be a contract, a statute or articles of association. It cannot introduce terms to make it fairer or more reasonable. It is concerned only to discover what the instrument means. However, that meaning is not necessarily or always what the authors or parties to the document would have intended...

.....

19.....In *Trollope & Colls Ltd. v. North West Metropolitan Regional Hospital Board* Lord Pearson, with whom Lord Guest and Lord Diplock agreed, said:

the court does not make a contract for the parties. The court will not even improve the contract which the parties have made for themselves, however desirable the improvement might be. The court's function is to interpret and apply the contract which the parties havemade for themselves. If the express terms are perfectly clear and free from ambiguity, there is no choice to be made between different possible meanings: the clear terms must be applied even if the court thinks some other terms would have been more suitable. An unexpressed term can be implied if and only if the court finds that the parties must have intended that term to form part of their contract: it is not enough for the court to find that such a term would have been adopted by the parties as reasonable men if it had been suggested to them: it must have been a term that went without saying, a term necessary to give business efficacy to the contract, a term which, though tacit, formed part of the contract which the parties made for themselves.

40. *Nabha Power Limited (NPL)*² also took note of the earlier judgment of this Court in *Satya Jain (Dead) Through L.Rs. and Ors. v. Anis Ahmed Rushdie (Dead) Through L.Rs. and Ors.* (2013) 8 SCC 131, which discussed the principle of business efficacy as proposed by Bowen, L.J. in the *Moorcock* (1889) LR 14 PD 64 (CA). It has been elucidated that this test requires that terms can be implied only if it is necessary to give business efficacy to the

contract to avoid failure of the contract and only the bare minimum of implication is to be there to achieve this goal. Thus, if the contract makes business sense without the implication of terms, the courts will not imply the same.

41. The judgment in Nabha Power Limited (NPL)² concluded with the following observations in para 72:

72. We may, however, in the end, extend a word of caution. It should certainly not be an endeavour of commercial courts to look to implied terms of contract. In the current day and age, making of contracts is a matter of high technical expertise with legal brains from all sides involved in the process of drafting a contract. It is even preceded by opportunities of seeking clarifications and doubts so that the parties know what they are getting into. Thus, normally a contract should be read as it reads, as per its express terms. The implied terms is a concept, which is necessitated only when the Penta-test referred to aforesaid comes into play. There has to be a strict necessity for it. In the present case, we have really only read the contract in the manner it reads. We have not really read into it any 'implied term' but from the collection of clauses, come to a conclusion as to what the contract says. The formula for energy charges, to our mind, was quite clear. We have only expounded it in accordance to its natural grammatical contour, keeping in mind the nature of the contract.

42. We have considered it appropriate to, once again, emphasise the aforesaid aspects, especially in the context of endeavours of courts to give their own interpretation to contracts, more specifically tender terms, at the behest of a third party competing for the tender, rather than what is propounded by the party framing the tender. The object cannot be that in every contract, where some parties would lose out, they should get the opportunity to somehow pick holes, to disqualify the successful parties, on grounds on which even the party floating the tender finds no merit.”

31. हाल ही में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सिविल अपील संख्या 1846 वर्ष 2022 मैसर्स एन जी प्रोजेक्ट्स लिमिटेड बनाम मेसर्स विनोद कुमार जैन और अन्य, जैसा कि 21.3.2022 को प्रस्तुत किया गया था, के निर्णय के पैरा 16 और 17 में अवधारित किया कि प्रक्रियात्मक अनौचित्य की व्याख्या के प्रभाव से संबंधित निर्णय का संदर्भ देते समय, टाटा सेल्यूलर बनाम भारत संघ (1994) 6 सुप्रीम कोर्ट केसेज 651 में रिपोर्ट किए गए निर्णय के अनुसार प्रवेश करने के लिए केवल यही गुंजाइश बची थी, विशेष रूप से टाटा सेल्यूलर के निर्णय के निर्णय में प्रतिपादित सिद्धांतों और (2016) 16 सुप्रीम कोर्ट केसेज 818 एफकोन्स इन्फ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड बनाम नागपुर मेट्रो रेल कॉर्पोरेशन और एक अन्य के साथ-साथ सिल्पी कंस्ट्रक्शन कॉन्ट्रैक्टर्स बनाम यूनियन ऑफ इंडिया 2019 एससीसी ऑनलाइन एससी 1133 के सिद्धांतों का

पालन करते हुए तथा इसके तुलनात्मक विश्लेषण पर विचार करते हुए पैरा 77 में दी गई शर्तों के अनुसार अंततः माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा हाल के निर्णय के पैरा 21 और 22 में जो निष्कर्ष निकाला गया है कि चूंकि सड़क का निर्माण एक अवसंरचना परियोजना है, इसलिए रिट न्यायालयों को अवसंरचना परियोजनाओं और बोली लगाने वालों के निर्माण पर रोक लगाने से बचना चाहिए। यदि उन्हें उठाने की अनुमति दी जाती है, सफल बोलीदाता को अयोग्य घोषित करने की संभावना है, जिस पर निविदा जारी करने वाले पक्ष को भी कोई दम नजर नहीं आता। इसके बजाय यह निर्धारित किया गया है कि निविदाओं के बारीक विवरणों की अनावश्यक और आकस्मिक जांच, भले ही यह निविदा प्राधिकरण के दृष्टिकोण के विपरीत हो, यदि यह संविदा देने को लागू करता है जिसके परिणामस्वरूप एक बोझिल और लंबी मुकदमेबाजी होती है, तो व्याख्या एक ऐसा निर्णय होना चाहिए जिसे क्षतिपूर्ति के भुगतान द्वारा उपयुक्त रूप से पारिश्रमिक दिया जा सके। सुसंगत पैराग्राफ 10, 16, 17, 21, 22 और 23 निम्नलिखित हैं—

“10. We find that the interference in contract awarded to the appellant is wholly unwarranted and has caused loss to public interest. Construction of roads is an essential part of development of infrastructure in any State. The learned Single Bench and the Division Bench of the High Court were exercising power of judicial review to find out whether the decision of the State was manifestly arbitrary or unjust as laid down by this Court in *Tata Cellular v. Union of India* 3 and to act as appellate authority over the decision of the State. This Court in *Tata Cellular* held as under:

“70. It cannot be denied that the principles of judicial review would apply to the exercise of contractual powers by Government bodies in order to prevent arbitrariness or 3 (1994) 6 SCC 651 5 favouritism. However, it must be clearly stated that there are inherent limitations in exercise of that power of judicial review. Government is the guardian of the finances of the State. It is expected to protect the financial interest of the State. The right to refuse the lowest or any other tender is always available to the Government. But, the principles laid down in Article 14 of the Constitution have to be kept in view while accepting or refusing a tender. There can be no question of infringement of Article 14 if the Government tries to get the best person or the best quotation. The right to choose cannot be considered to be an arbitrary power. Of course, if the said power is exercised for any collateral purpose the exercise of that power will be struck down.

XX

XX

XX

77. The duty of the court is to confine itself to the question of legality. Its concern should be:

1. Whether a decision-making authority exceeded its powers? 2. Committed an error of law, 3. committed a breach of the rules of natural justice, 4. reached a decision which no reasonable tribunal would have reached or, 5. abused its powers.

Therefore, it is not for the court to determine whether a particular policy or particular decision taken in the fulfilment of that policy is fair. It is only concerned with the manner in which those decisions have been taken. The extent of the duty to act fairly will vary from case to case. Shortly put, the grounds upon which an administrative action is subject to control by judicial review can be classified as under:

(i) Illegality : This means the decision-maker must understand correctly the law that regulates his decision-making power and must give effect to it.

(ii) Irrationality, namely, Wednesbury unreasonableness.

(iii) Procedural impropriety.

The above are only the broad grounds but it does not rule out addition of further grounds in course of time. As a matter of fact, in *R. v. Secretary of State for the Home Department, ex Brind* [(1991) 1 AC 696] , Lord Diplock refers specifically to one development, namely, the possible recognition of the principle of proportionality. In all these cases the test to be adopted is that the court should, “consider whether something has gone wrong of a nature and degree which requires its intervention”.

xx

xx

94. The principles deducible from the above are:

(1) The modern trend points to judicial restraint in administrative action.

(2) The court does not sit as a court of appeal but merely reviews the manner in which the decision was made.

(3) The court does not have the expertise to correct the administrative decision. If a review of the administrative decision is permitted it will be substituting its own decision, without the necessary expertise which itself may be fallible.

(4) The terms of the invitation to tender cannot be open to judicial scrutiny because the invitation to tender is in the realm of contract. Normally speaking, the decision to accept the tender or award the contract is reached by process of negotiations through several tiers. More often than not, such decisions are made qualitatively by experts.

(5) The Government must have freedom of contract. In other words, a fair play in the joints is a necessary concomitant for an administrative body functioning in an administrative sphere or quasi-administrative sphere. However, the decision must not only be tested by the application of Wednesbury principle of

reasonableness (including its other facts pointed out above) but must be free from arbitrariness not affected by bias or actuated by mala fides.

(6) Quashing decisions may impose heavy administrative burden on the administration and lead to increased and unbudgeted expenditure. Based on these principles we will examine the facts of this case since they commend to us as the correct principles.”

16. In **Galaxy Transport Agencies v. New J.K. Roadways**, a three-judge bench again reiterated that the authority that authors the tender document is the best person to understand and appreciate its requirements, and thus, its interpretation should not be second-guessed by a court in judicial review proceedings. It was observed as thus:

9 2020 SCC OnLine SC 1035

“17. In accordance with these judgments and noting that the interpretation of the tendering authority in this case cannot be said to be a perverse one, the Division Bench ought not to have interfered with it by giving its own interpretation and not giving proper credence to the word “both” appearing in Condition No. 31 of the N.I.T. For this reason, the Division Bench's conclusion that JK Roadways was wrongly declared to be ineligible, is set aside.

18. Insofar as Condition No. 27 of the N.I.T. prescribing work experience of at least 5 years of not less than the value of Rs. 2 crores is concerned, suffice it to say that the expert body, being the Tender Opening Committee, consisting of four members, clearly found that this eligibility condition had been satisfied by the Appellant before us. Without therefore going into the assessment of the documents that have been supplied to this Court, it is well settled that unless arbitrariness or mala fide on the part of the tendering authority is alleged, the expert evaluation of a particular tender, particularly when it comes to technical evaluation, is not to be second-guessed by a writ court. Thus, in *Jagdish Mandal v. State of Orissa*, (2007) 14 SCC 517, this Court noted:

“22. Judicial review of administrative action is intended to prevent arbitrariness, irrationality, unreasonableness, bias and mala fides. Its purpose is to check whether choice or decision is made “lawfully” and not to check whether choice or decision is “sound”. When the power of judicial review is invoked in matters relating to tenders or award of contracts, certain special features should be borne in mind. A contract is a commercial transaction. Evaluating tenders and awarding contracts are essentially commercial functions. Principles of equity and natural justice stay at a distance. If the decision relating to award of contract is bona fide and is in public interest, courts will not, in exercise of power of judicial review, interfere even

if a procedural aberration or error in assessment or prejudice to a tenderer, is made out. The power of judicial review will not be permitted to be invoked to protect private interest at the cost of public interest, or to decide contractual disputes. The tenderer or contractor with a grievance can always seek damages in a civil court. Attempts by unsuccessful tenderers with imaginary grievances, wounded pride and business rivalry, to make mountains out of 15 molehills of some technical/procedural violation or some prejudice to self, and persuade courts to interfere by exercising power of judicial review, should be resisted. Such interferences, either interim or final, may hold up public works for years, or delay relief and succour to thousands and millions and may increase the project cost manifold. Therefore, a court before interfering in tender or contractual matters in exercise of power of judicial review, should pose to itself the following questions:

- (i) Whether the process adopted or decision made by the authority is mala fide or intended to favour someone; or Whether the process adopted or decision made is so arbitrary and irrational that the court can say:“ the decision is such that no responsible authority acting reasonably and in accordance with relevant law could have reached”;
- (ii) Whether public interest is affected.

If the answers are in the negative, there should be no interference under Article 226. Cases involving blacklisting or imposition of penal consequences on a tenderer/contractor or distribution of State largesse (allotment of sites/shops, grant of licences, dealerships and franchises) stand on a different footing as they may require a higher degree of fairness in action.”

xx xx xx

20. This being the case, we are unable to fathom how the Division Bench, on its own appraisal, arrived at the conclusion that the Appellant held work experience of only 1 year, substituting the appraisal of the expert four-member Tender Opening Committee with its own.”

17. Therefore, the position of law with regard to the interpretation of terms of the contract is that the question as to whether a term of the contract is essential or not is to be viewed from the perspective of the employer and by the employer. Applying the aforesaid position of law to the 16 present case, it has been the contention of respondent No. 1 that the format for bank guarantee was not followed strictly by the State and that the relaxation given was not uniform, in that respondent No. 1 was singled out. The said contention has found favour with the Courts below.

21. Since the construction of road is an infrastructure project and keeping in view the intent of the legislature that infrastructure

projects should not be stayed, the High Court would have been well advised to hold its hand to stay the construction of the infrastructure project. Such provision should be kept in view even by the Writ Court while exercising its jurisdiction under Article 226 of the Constitution of India.

22. The satisfaction whether a bidder satisfies the tender condition is primarily upon the authority inviting the bids. Such authority is aware of expectations from the tenderers while evaluating the consequences of 19 non-performance. In the tender in question, there were 15 bidders. Bids of 13 tenderers were found to be unresponsive i.e., not satisfying the tender conditions. The writ petitioner was one of them. It is not the case of the writ petitioner that action of the Technical Evaluation Committee was actuated by extraneous considerations or was malafide. Therefore, on the same set of facts, different conclusions can be arrived at in a bona-fide manner by the Technical Evaluation Committee. Since the view of the Technical Evaluation Committee was not to the liking of the writ petitioner, such decision does not warrant for interference in a grant of contract to a successful bidder.

23. In view of the above judgments of this Court, the Writ Court should refrain itself from imposing its decision over the decision of the employer as to whether or not to accept the bid of a tenderer. The Court does not have the expertise to examine the terms and conditions of the presentday economic activities of the State and this limitation should be kept in view. Courts should be even more reluctant in interfering with contracts involving technical issues as there is a requirement of the necessary expertise to adjudicate upon such issues. The approach of the Court should be not to find fault with magnifying glass in its hands, rather the Court should examine as to whether the decision making process is after complying with the procedure contemplated by the tender conditions. If the Court finds that there is total arbitrariness or that the tender has been granted in a malafide manner, still the Court should refrain from interfering in the grant of tender but instead relegate the parties to seek damages for the wrongful exclusion rather than to injunct the execution of the contract. The injunction or interference in the tender leads to additional costs on the State and is also against public interest. Therefore, the State and its citizens suffer twice, firstly by paying escalation costs and secondly, by being deprived of the infrastructure for which the present-day Governments are expected to work.”

32. यही सिद्धांत एफकॉन्स इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड बनाम नागपुर मेट्रो रेल कॉर्पोरेशन और एक अन्य के पैरा 15 और 16 में प्रतिपादित किए गए हैं जो निम्नलिखित है—

“15. We may add that the owner or the employer of a project, having authored the tender documents, is the best person to understand and

appreciate its requirements and interpret its documents. The constitutional Courts must defer to this understanding and appreciation of the tender documents, unless there is mala fide or perversity in the understanding or appreciation or in the application of the terms of the tender conditions. It is possible that the owner or employer of a project may give an interpretation to the tender documents that is not acceptable to the constitutional Courts but that by itself is not a reason for interfering with the interpretation given.

16. In the present appeals, although there does not appear to be any ambiguity or doubt about the interpretation given by NMRCL to the tender conditions, we are of the view that even if there was such an ambiguity or doubt, the High Court ought to have refrained from giving its own interpretation unless it had come to a clear conclusion that the interpretation given by NMRCL was perverse or mala fide or intended to favour one of the bidders. This was certainly not the case either before the High Court or before this Court.

33. इस प्रकार उपर्युक्त सिद्धांतों के आधार पर, यह निर्धारित है कि संवैधानिक न्यायालय निविदा दस्तावेज की व्याख्या करने से बच सकते हैं और संवैधानिक न्यायालय को केवल वहां प्रवेश करना चाहिए, जहां दुर्भावना या विकृति है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट न्यायालयों द्वारा निविदा मामलों में हस्तक्षेप करते समय कोई अंतरिम आदेश नहीं दिया जा सकता है।

34. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा गैलेक्सी ट्रांसपोर्ट एजेंसिज, कॉन्ट्रेक्टर्स, ट्रेडर्स, ट्रांसपोर्ट और सपलायर्स बनाम न्यू जेके रोडवेज, फ्लीट ओनर्स एण्ड ट्रांसपोर्ट कॉन्ट्रेक्टर्स और अन्य (2020) एससीसी ऑनलाईन एससी 1035 के पैरा 14 और 19 में इसी तरह का सिद्धांत प्रतिपादित किया गया है। इस मामले में भी माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 14, 15 और 16 में सिल्पी कंस्ट्रक्शन और एफकॉन्स इंफ्रास्ट्रक्चर के निर्णयों का उल्लेख करते हुए कहा है कि अंतरिम आदेश देने के निहितार्थ पर विचार करने का सार क्या होगा, जहां प्रशासनिक कार्यवाही की न्यायिक समीक्षा को केवल तभी रोकने का इरादा है जब मनमानी तर्कहीनता या अनुचितता हो जब तक ऐसा नहीं है, अदालत द्वारा पारित अंतरिम आदेशों से सार्वजनिक परियोजनाओं पर रोक नहीं लगाई जा सकती थी। सुसंगत पैरा 14 से 19 निम्नलिखित हैं—

“14. In a series of judgments, this Court has held that the authority that authors the tender document is the best person to understand and appreciate its requirements, and thus, its interpretation should not be second-guessed by a court in judicial review proceedings. In *Afcons Infrastructure Ltd. v. Nagpur Metro Rail Corporation Ltd.*, 2016 (16) SCC 818, this Court held:

“15. We may add that the owner or the employer of a project, having authored the tender documents, is the best person to understand and appreciate its requirements and interpret its documents. The constitutional courts must defer to this

understanding and appreciation of the tender documents, unless there is mala fide or perversity in the understanding or appreciation or in the application of the terms of the tender conditions. It is possible that the owner or employer of a project may give an interpretation to the tender documents that is not acceptable to the constitutional courts but that by itself is not a reason for interfering with the interpretation given.

(page 825)

(emphasis supplied)

15. In the judgment in *Bharat Coking Coal Ltd. v. AMR Dev Prabha*, under the heading "Deference to authority's interpretation", this Court stated:

“51. Lastly, we deem it necessary to deal with another fundamental problem. It is obvious that Respondent No. 1 seeks to only enforce terms of the NIT. Inherent in such exercise is interpretation of contractual terms. However, it must be noted that judicial interpretation of contracts in the sphere of commerce stands on a distinct footing than while interpreting statutes.

52. In the present facts, it is clear that BCCL and India have laid recourse to Clauses of the NIT, whether it be to justify condonation of delay of Respondent No. 6 in submitting performance bank guarantees or their decision to resume auction on grounds of technical failure. BCCL having authored these documents, is better placed to appreciate their requirements and interpret them.

53. The High Court ought to have deferred to this understanding, unless it was patently perverse or mala fide. Given how BCCL's interpretation of these clauses was plausible and not absurd, solely differences in opinion of contractual interpretation ought not to have been grounds for the High Court to come to a finding that the Appellant committed illegality.

(emphasis supplied)

16. Further, in the recent judgment in *Silppi Constructions Contractors v. Union of India*, this Court held as follows:

“20. The essence of the law laid down in the judgments referred to above is the exercise of restraint and caution; the need for overwhelming public interest to justify judicial intervention in matters of contract involving the state instrumentalities; the courts should give way to the opinion of the experts unless the decision is totally arbitrary or unreasonable; the court does not sit like a court of appeal over the appropriate authority; the court must realise that the authority floating the tender is the best judge of its requirements and, therefore, the court's interference should be minimal. The authority which floats the

contract or tender, and has authored the tender documents is the best judge as to how the documents have to be interpreted. If two interpretations are possible then the interpretation of the author must be accepted. The courts will only interfere to prevent arbitrariness, irrationality, bias, mala fides or perversity. With this approach in mind we shall deal with the present case.

(emphasis supplied)

17. In accordance with these judgments and noting that the interpretation of the tendering authority in this case cannot be said to be a perverse one, the Division Bench ought not to have interfered with it by giving its own interpretation and not giving proper credence to the word "both" appearing in Condition No. 31 of the N.I.T. For this reason, the Division Bench's conclusion that JK Roadways was wrongly declared to be ineligible, is set aside.

18. Insofar as Condition No. 27 of the N.I.T. prescribing work experience of at least 5 years of not less than the value of Rs. 2 crores is concerned, suffice it to say that the expert body, being the Tender Opening Committee, consisting of four members, clearly found that this eligibility condition had been satisfied by the Appellant before us. Without therefore going into the assessment of the documents that have been supplied to this Court, it is well settled that unless arbitrariness or mala fide on the part of the tendering authority is alleged, the expert evaluation of a particular tender, particularly when it comes to technical evaluation, is not to be second-guessed by a writ court. Thus, in *Jagdish Mandal v. State of Orissa*, (2007) 14 SCC 517, this Court noted:

“22. Judicial review of administrative action is intended to prevent arbitrariness, irrationality, unreasonableness, bias and mala fides. Its purpose is to check whether choice or decision is made "lawfully" and not to check whether choice or decision is "sound". When the power of judicial review is invoked in matters relating to tenders or award of contracts, certain special features should be borne in mind. A contract is a commercial transaction. Evaluating tenders and awarding contracts are essentially commercial functions. Principles of equity and natural justice stay at a distance. If the decision relating to award of contract is bona fide and is in public interest, courts will not, in exercise of power of judicial review, interfere even if a procedural aberration or error in assessment or prejudice to a tenderer, is made out. The power of judicial review will not be permitted to be invoked to protect private interest at the cost of public interest, or to decide contractual disputes. The tenderer or contractor with a grievance can always seek damages in a civil court. Attempts by unsuccessful tenderers with imaginary grievances, wounded pride and business rivalry, to make mountains out of molehills of some technical/procedural

violation or some prejudice to self, and persuade courts to interfere by exercising power of judicial review, should be resisted. Such interferences, either interim or final, may hold up public works for years, or delay relief and succour to thousands and millions and may increase the project cost manifold. Therefore, a court before interfering in tender or contractual matters in exercise of power of judicial review, should pose to itself the following questions:

(i) Whether the process adopted or decision made by the authority is mala fide or intended to favour someone;

or

Whether the process adopted or decision made is so arbitrary and irrational that the court can say: "the decision is such that no responsible authority acting reasonably and in accordance with relevant law could have reached";

(ii) Whether public interest is affected.

If the answers are in the negative, there should be no interference Under Article 226. Cases involving blacklisting or imposition of penal consequences on a tenderer/contractor or distribution of State largesse (allotment of sites/shops, grant of licences, dealerships and franchises) stand on a different footing as they may require a higher degree of fairness in action.

(pages 531-532)

(emphasis supplied)

19. Similarly, in *Montecarlo Ltd. v. NTPC Ltd.*, 2016 (15) SCC 272, this Court stated as follows:

“26. We respectfully concur with the aforesaid statement of law. We have reasons to do so. In the present scenario, tenders are floated and offers are invited for highly complex technical subjects. It requires understanding and appreciation of the nature of work and the purpose it is going to serve. It is common knowledge in the competitive commercial field that technical bids pursuant to the notice inviting tenders are scrutinised by the technical experts and sometimes third-party assistance from those unconnected with the owner's organisation is taken. This ensures objectivity. Bidder's expertise and technical capability and capacity must be assessed by the experts. In the matters of financial assessment, consultants are appointed. It is because to check and ascertain that technical ability and the financial feasibility have sanguinity and are workable and realistic. There is a multi-prong complex approach; highly technical in nature. The tenders where public largesse is put to auction stand on a different compartment. Tender with which we are concerned, is not comparable to any scheme for allotment. This arena which

we have referred requires technical expertise. Parameters applied are different. Its aim is to achieve high degree of perfection in execution and adherence to the time schedule. But, that does not mean, these tenders will escape scrutiny of judicial review. Exercise of power of judicial review would be called for if the approach is arbitrary or mala fide or procedure adopted is meant to favour one. The decision-making process should clearly show that the said maladies are kept at bay. But where a decision is taken that is manifestly in consonance with the language of the tender document or subserves the purpose for which the tender is floated, the court should follow the principle of restraint. Technical evaluation or comparison by the court would be impermissible. The principle that is applied to scan and understand an ordinary instrument relatable to contract in other spheres has to be treated differently than interpreting and appreciating tender documents relating to technical works and projects requiring special skills. The owner should be allowed to carry out the purpose and there has to be allowance of free play in the joints.

35. पूर्वोक्त कारणों और तर्कों के आधार पर इस न्यायालय का मत है कि प्रश्नगत मामला पहाड़ियों में सार्वजनिक सड़क बिछाने से संबंधित है, जो बड़े पैमाने पर जनता के लाभ के लिए एक सार्वजनिक परियोजना है और वह भी गलत व्याख्या के आधार पर, जिसे याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा एक मामूली अंतर पर आधारित "ट्रैक्टर" शब्द की व्याख्या करने का प्रयास किया गया, जो पहले से ही उपरोक्त वर्णित और माननीय सर्वोच्च न्यायालय सहित सक्षम न्यायालयों द्वारा तय किए गए वैधानिक सिद्धांतों के विपरीत है। याचिकाकर्ता के अधिवक्ता का तर्क है कि चूंकि एसटीबी दस्तावेज "ट्रैक्टर" शब्द को सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए एक कृषि वाहन या वाणिज्यिक वाहन होने के रूप में वर्गीकृत नहीं करता है, जिसे लॉ लेक्सिकॉन से ऊपर संदर्भित किया गया है और जस्टिस एमएल सिंघल के द्वारा न्यायिक व्याख्यान दिया गया है, "ट्रैक्टर" शब्द को कृषि उपकरण के रूप में निर्धारित करने वाला कानून एसटीबी दस्तावेज में दिए गए शब्द पर अभिभावी होगा। इसलिए, इस स्तर पर इस न्यायालय द्वारा तर्क को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। नतीजतन, उपरोक्त कारणों से, इस न्यायालय का मत है कि इस न्यायालय द्वारा दिए गए अंतरिम आदेश को जारी रखना, क्योंकि जनता के हितों के विपरीत है, सार्वजनिक परियोजना को स्थापित करने के लिए इसे जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, इसलिए इसे खारिज किया जाता है।

(शरद कुमार शर्मा, ज0)

12.05.2022